RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-03
March -2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

साहित्य की बहुआयामी कृति : स्वयंप्रभा

डॉ. अनिल सिंह

अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग, सोनुभाऊ बसवंत महाविद्यालय, शहापुर, ठाणे (महाराष्ट्र)

साहित्य और इतिहास का संबंध बड़ा अनूठा है । साहित्य, इतिहास से ऊर्जा ग्रहण करके समाज हित में बहुत कुछ रचता रहता है। और साहित्य भी एक तरह का इतिहास ही होता है, जिसमें जीवंतता होती है। इतिहास से प्रेरणा लेकर अनेक कवियों और लेखकों ने हिंदी में विभिन्न विधाओं में रचनाएं लिखी हैं। ऐसे उपन्यासों, कहानियों और महाकाव्य तथा खंडकाव्य की हिंदी साहित्य में कमी नहीं है। स्वयंप्रभा खंडकाव्य भी ऐसा ही खंडकाव्य है जिसका आधार भारतीय साहित्य परंपरा के अद्भुत महाकाव्य ग्रंथों 'वाल्मीकि रामायण' तथा 'रामचरितमानस' से लिया गया है। ऐसी रचनाओं के पीछे लेखक या कवि का अपना कोई उद्देश्य निश्चित रूप से होता है। कभी उसे वर्तमान संदर्भ में पुनर्व्याख्यायित किया जाता है या कभी उन ग्रंथों में किसी पात्र को जो स्थान मिलना चाहिए वह न मिलने के कारण कवि अपनी व्यक्तिगत संवेदना से उसे विकसित कर उसकी महत्व प्रतिष्ठा करता है। कवि उद्भ्रांत ने इन दोनों ही उद्देश्यों को मिला-जुला कर इस खंडकाव्य की रचना की है।

यह खंडकाव्य 'स्वयंप्रभा' नामक तपस्विनी पर आधारित है। स्वयंप्रभा मेरुसावर्णि ऋषि की पुत्री थी और ऋक्षबिल नामक गिरि दुर्ग के निकट अपने पिता के आश्रम में रहती थी। वहीं रहकर वह अपनी तपस्या आदि करती थी। कृति 'स्वयंप्रभा' की भूमिका में कवि उद्भ्रांत उसका परिचय देते हुए लिखते हैं, "मेरुसावर्णि ऋषि की पुत्री स्वयंप्रभा ऋक्षबिल नामक गिरि दुर्ग के निकट अपने पिता के आश्रम में रहती थी।"[1] इस ग्रंथ की रचना से पूर्व कवि उद्भ्रांत ने स्वयंप्रभा के चरित्र पर अच्छा खासा शोध किया। दरअसल सनातनधर्मी परिवारों की परंपरा के अनुसार कवि उद्भ्रांत भी रामचरितमानस का पाठ करते थे। ऐसे ही एक पाठ के दौरान उनकी दृष्टि एक पात्र पर टिक गई, जिसका तुलसीदास ने अपने रामचरितमानस में नामोल्लेख भी ठीक नहीं समझा। यह बात कवि को कुछ खटक गई और उन्होंने अन्य स्रोतों का भी अध्ययन किया। जिसके आधार पर वे उसके नाम और उसके चरित्र आदि के बारे में जानकारी एकत्रित कर सके और उस पर खंडकाव्य की रचना एक तरह से स्वयंप्रभा के प्रति उनका समर्पण है, श्रद्धांजलि है।

कवि को स्वयंप्रभा का चरित्र आकर्षित क्यों कर सकता है ? इसका उल्लेख भी खंडकाव्य की भूमिका से मिल जाता है। वास्तव में यह सोचनीय प्रश्न है कि जिस चरित्र की भूमिका के कारण राम को सीता का पता मिलता है और राम लंका तक पहुंचते हैं, फिर रावण-वध के पश्चात वे सीता को वापस ले आने में सफल होते हैं। यह सारा घटनाक्रम यदि सोचा जाए तो तभी संभव हो सका है जब सीता की खोज में निकले हनुमान, जामवंत, अंगद आदि को स्वयंप्रभा द्वारा समुद्र तट पर रह रहे संपाती तक पहुंचाया जाता है। हनुमान, जामवंत आदि का मार्गदर्शन करते हुए स्वयंप्रभा उन्हें बताती है -

"तो मैं करूंगी मदद,
अपने योगबल से
एक ही क्षण में
समूचे वानरी-दल को
निकालूँगी यहां से
उस जगह पर -
जहां से
तुमको लगेगा
पता बिल्कुल ठीक
माता जानकी हैं कहाँ ?"[2]

इस रूप में स्वयंप्रभा की बड़ी निर्णायक भूमिका है। यदि वह तपस्विनी सीता की खोज में भटक रहे इन यात्रियों को संपाती तक न पहुंचाती तो यह कभी सीता का पता ठीक-ठीक शायद ही लगा सकते और तब हम विचार कर सकते हैं कि राम और रावण का युद्ध किस तरह संभव होता ? किस तरह रावण का वध होता ? और सीता की वापसी किस तरह संभव होती ? इन सारे प्रश्नों के आलोक में हम स्वयंप्रभा के चरित्र के महत्व को भली-भांति समझ सकते हैं। इस संबंध में उद्भ्रांत कहते हैं कि, "जिसके कारण सीता की खोज में निकले हनुमान, जामवंत, अंगद, नल-नील सहित - क्षुधा और प्यास से पीड़ित, काल के गाल में समाने को आतुर पराक्रमी वानर-समूह में, उसके आश्रम के फल-फूल खाकर और उसी आश्रम के पवित्र सरवर में स्नान कर नए जीवन का संचार हुआ; और जिसके तपोबल ने उन्हें

RRIJM 2015, All Rights Reserved

उस दुर्गम आश्रम से निमिष मात्र में ही प्रक्षेपित करते हुए समुद्र के तट तक, सीता का हरण करने वाले दशानन से मरणांतक युद्ध कर अपने प्राणों को होम देने वाले गिद्धराज जटायु के उस वयोवृद्ध, अपाहिज भाई - संपाती के निकट पहुँचा दिया, जिसने प्रकृति-प्रदत्त अपनी दूरदृष्टि से सीता जी की झलक प्रत्यक्ष करते हुए रावण-वध के श्रीराम के कार्य को सुगम बना दिया।"[3] कवि उद्भ्रांत के इस कथन से हम रामकथा में स्वयंप्रभा के चरित्र के महत्व को भली-भांति समझ सकते हैं।

स्वयंप्रभा के चरित्र को कवि ने लाक्षणिक और व्यंजनात्मक अर्थ में भी प्रयुक्त किया है। स्वयंप्रभा ऐसी जिजीविषा का प्रतीक है जो अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए जन्म-जन्मांतर तक साधनारत रहती है। उसका लक्ष्य है - विष्णु का दर्शन और यह दर्शन उसे राम के रूप में प्राप्त होने का आश्वासन मिलता है। युगों तक वह राम की प्रतीक्षा में रत रहती है और अंततः वह समय आता है, जब वह चिर महत्त्व का काम करते हुए राम के दर्शन प्राप्त कर अपने जीवन का लक्ष्य पूरा करती है-

"और उसके बाद
अपने योगबल से
पहुँचकर किष्किंधनगरी
ऋष्यमूक पर्वत पर
प्रभु दर्शन करुंगी
मैं युगों से
हूँ साधना करती रही
जिसके लिए।"[4]

कवि ने स्वयंप्रभा के इस लाक्षणिक अर्थ को व्यक्त करते हुए कहा है, "स्वयंप्रभा को मनुष्य के भीतर के उस असाधारण भाव के रूप में भी पहचानना चाहिए - जो उसे पराशक्ति का रूप देते हुए, अपने चरम लक्ष्य की संप्राप्ति हेतु - एक अमोघ साधना-शक्ति केंद्र के रूप में - अंतस्थल के किसी 'निर्वात' कोने में अद्भुत ज्योति बिखेरते हुए जगमगाता है।"[5] इस तरह स्वयंप्रभा के चरित्र को कवि उद्भ्रांत ने विभिन्न दृष्टियों से विकसित किया है। एक तरफ तो वह अपने उस महाकाव्यात्मक अर्थ में प्रकट होती है, जो रामायण और रामचरितमानस की देन है, तो दूसरी तरफ कवि उसके चरित्र का विकास करने में मौलिक उदभावनाओं का प्रयोग भी अत्यंत सफलतापूर्वक करता है। कवि ने स्वयंप्रभा के चरित्र का विकास मानव-कल्याण को ध्यान में रखते हुए और व्यापक रूप में किया है।

इस खंडकाव्य को और व्यापकता देने के उद्देश्य से कवि उद्भ्रांत ने इसे आधुनिक चेतना से संपन्न करने का भी विशिष्ट कार्य किया है। जिसके लिए उन्होंने मौलिकता का परिचय दिया है। वर्तमान समय में जिस ढंग से पर्यावरण एक समस्या के रूप में मानव प्रजाति के सामने उपस्थित हुआ है, वह पूरी मानव प्रजाति के लिए एक चिंता का विषय है। इस समस्या के उपजने का कारण स्वयं मनुष्य ही है। मनुष्य ने विकास की अंधी दौड़ में दौड़ते हुए यह देखने की भी चेष्टा नहीं की कि, उसके कार्यों का क्या दुष्प्रभाव प्रकृति और वातावरण पर पड़ रहा है। इस रूप में उद्भ्रांत मनुष्य और राक्षसों को एक समान ही देखते हैं। प्रकृति के प्रति अपनी चिंता व्यक्त करते हुए उद्भ्रांत लिखते हैं -

"पेड़-पौधे-वृक्ष
जो हैं बहुत आवश्यक
प्रकृति के संतुलन के हित
उन्हें वे रौंदते -
देते उखाड़।
नए पौधों को
लगाने की
भला क्या सोचते वे ?"[6]

जिस प्रकृति पर पूरी मनुष्य प्रजाति का जीवन आधारित है, उसकी रक्षा का दायित्व क्या मनुष्य का नहीं है ? परंतु मनुष्य अपने इस दायित्व को पूरा कर पाने में असफल रहा है। पूरे विश्व में भयंकर निर्माण कार्यों ने जंगलों और जैव-विविधता को छिन्न-भिन्न करके रख दिया है। भूमि के अतिरिक्त समुद्र और वायु भी उसके इस प्रकोप से बच नहीं सके हैं। वर्तमान समय में स्थिति इतनी भयावह है कि भूमिगत जल तक प्रदूषित हो चुका है। नदियाँ प्रदूषण के प्रकोप से आक्रांत हैं और वायुमंडल भी अत्यंत बुरी दशा में है। प्रदूषण के कारण विश्व के कई महानगरों में छाया रहने वाला कुहासा अभी मात्र संकेत है। अगर स्थिति को संभालने का यत्न नहीं किया जाएगा तो पूरी मानव प्रजाति के समक्ष प्राणवायु का संकट भी खड़ा हो जाएगा। कवि उद्भ्रांत ने इन्हीं उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए ऋषि कण्डु की कथा को का उपयोग इस खंडकाव्य में किया है। उद्भ्रांत लिखते हैं कि, "ऋषि कण्डु की अंतर्कथा का उपयोग मैंने आधुनिक युग की पर्वताकार, विश्वव्यापी ज्वलंत समस्याओं - वनों के तेजी से कटाव, जल में प्रवाहित कचरे से और वायु में धूल-धुंध-धुएँ से तथा कानफोड़ शोर-शराबे से व्याप्त होते (ध्वनि) प्रदूषण, धरती की उर्वरा शक्ति के घटने, मनुष्य की चिकित्सा के लिए अब विज्ञान द्वारा भी मान्य होते प्राकृतिक जड़ी-बूटियों के चिकित्सा विज्ञान आयुर्वेद के महत्व, पर्यावरण की स्वच्छता और इन उद्देश्यों के लिए वनों के संरक्षण की आवश्यकता पर बल देने के लिए भी किया है।"[7]

इस तरह इस खंडकाव्य को आधुनिक जनजीवन से जोड़ने का दुष्कर कार्य भी कवि उद्भ्रांत के द्वारा किया गया है। पर्यावरण प्रदूषण

की भयावहता पर आगे और संकेत करते हुए उद्भ्रांत लिखते हैं कि, "पर्यावरण-प्रदूषण की समस्या कितनी भयावह हो चुकी है, इसे बताने की आवश्यकता नहीं इसका दूरगामी प्रभाव हमारी पृथ्वी की सुरक्षा पर भी पड़ने लगा है। वैज्ञानिकों का कहना है कि इस विषाक्त वातावरण के कारण ही हमारी पृथ्वी के वायुमंडल की सुरक्षा वाले अभेद्य कवच - ओजोन परत - में छिद्र हो गया है जो दिनों दिन बढ़ता जा रहा है। इस कारण सूर्य की पराबैंगनी किरणों का ताप - जिसे जीवन के लिए घातक माना जाता है और जिससे ओजोन परत ही हमें सुरक्षा प्रदान करती रही है - पृथ्वी पर बढ़ता जा रहा है। वह दिन दूर नहीं, जब पृथ्वी पर जीवन के लिए अनिवार्य तत्वों का विध्वंस शुरू हो जाएगा।"[8] इस तरह कवि उद्भ्रांत के सामने एक तरफ तो यह प्रश्न था कि स्वयंप्रभा के चरित्र को उसका वास्तविक महत्व किस तरह दिलाया जाए, जिसके लिए उन्होंने इस खंडकाव्य की रचना की तो दूसरी तरफ खंडकाव्य को समसामयिक उद्देश्यों के अनुरूप बनाने के लिए उन्होंने पर्यावरण प्रदूषण की समस्या को भी इस खंडकाव्य में केंद्र में रखा और अपनी रचना को प्रासंगिकता प्रदान की।

इन उपर्युक्त उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए कवि उद्भ्रांत ने इस खंडकाव्य की अत्यंत सुंदर ढंग से योजना की है। पूरा खंडकाव्य नौ सर्गों में विभाजित है - मरू, माया, मुमुक्षु, मार्ग, मही, मारुति, माँ, महोदधि तथा महाकाश। मरू इस खंडकाव्य का प्रथम सर्ग है तथा महाकाश इसका अंतिम सर्ग है। माया इस खंडकाव्य का सबसे बड़ा सर्ग है और इसी सर्ग में कवि उद्भ्रांत ने पर्यावरण प्रदूषण की समस्या को जाहिर किया है, जिसका कारण वे राक्षस थे,जो यहां साधना रत ऋषि-मुनियों के आश्रम के पवित्र वातावरण को दूषित करने के लिए आ जाते थे -

"आश्रमों की शांत हरियाली
बनी कारण, कि जिसकी ओर
आकर्षित हुए
समुदाय असुरों के"[9]

सचमुच वे मनुष्य भी असुर ही हैं जो अपने जीवन के लिए मूल्यवान प्रकृति के अर्थ को नहीं समझते हैं। आज समूची मानव जाति असुरों के रूप में ही परिवर्तित हो चुकी है और इन्हीं का चित्रण कवि ने अपने खंडकाव्य में किया है। समय के साथ असुरों ने उस पूरे वातावरण को जिस ढंग से प्रदूषित किया उसे व्यक्त करते हुए उद्भ्रांत कहते हैं -

"भर गई दुर्गंध
उस वातावरण में।
फैलने
बीमारियां फिर लगीं
ऋषि-मुनि आश्रमों में।
फेफड़े छलनी लगे होने,
हृदय पर घात होता
दृष्टि होवे क्षीण,
ऊँचा लगे सुनने कान -
बहरापन बढ़ा।"[10]

इस तरह कवि उद्भ्रांत ने 'स्वयंप्रभा' खंडकाव्य में पर्यावरण प्रदूषण के कारणों और उसके प्रभावों का चित्रण किया है । इस खंडकाव्य में मारुति सर्ग में हनुमान अंगद आदि की भेंट पहली बार स्वयंप्रभा से होती है। जिससे प्रार्थना और अनुमति लेकर वे स्वयंप्रभा के आश्रम में स्नान आदि कर क्षुधा पूर्ति करते हैं। यही वह स्थल है जहां स्वयंप्रभा हनुमान आदि का मार्गदर्शन करते हुए उन्हें संपाती का पता बताती है और अपने इस उद्देश्य को पूरा कर वह प्राप्त वरदान के अनुरूप श्री राम के दर्शनों को निकल जाती है। इस तरह क वि उद्भ्रांत ने अपने इस खंडकाव्य में एक तरफ तो स्वयंप्रभा के विश द चित्रण के द्वारा उसके चरित्र की महत्व स्थापना की है और दूसरी तरफ पर्यावरण प्रदूषण जैसी समस्या को इसमें सम्मिलित कर इसे आधुनिक संदर्भों के अनुकूल बनाया है और इस खंडकाव्य के भावबोध को व्यापकता प्रदान की है।

संदर्भ:

1. स्वयंप्रभा - उद्भ्रांत; पृष्ठ 9 ; अमन प्रकाशन,कानपुर
2. स्वयंप्रभा - उद्भ्रांत; पृष्ठ 93 ; अमन प्रकाशन,कानपुर
3. स्वयंप्रभा - उद्भ्रांत; पृष्ठ 8 ; अमन प्रकाशन,कानपुर
4. स्वयंप्रभा - उद्भ्रांत; पृष्ठ 93-94;अमन प्रकाशन,कानपुर
5. स्वयंप्रभा - उद्भ्रांत; पृष्ठ 15 ; अमन प्रकाशन,कानपुर

RRIJM 2015, All Rights Reserved

6. स्वयंप्रभा - उद्भ्रांत; पृष्ठ 34 ; अमन प्रकाशन,कानपुर
7. स्वयंप्रभा - उद्भ्रांत; पृष्ठ 13 ; अमन प्रकाशन,कानपुर
8. स्वयंप्रभा - उद्भ्रांत; पृष्ठ 13 ; अमन प्रकाशन,कानपुर
9. स्वयंप्रभा - उद्भ्रांत; पृष्ठ 40 ; अमन प्रकाशन,कानपुर
10. स्वयंप्रभा -उद्भ्रांत; पृष्ठ 36 ; अमन प्रकाशन, कानपुर

RRIJM 2015, All Rights Reserved